भारत में मूर्ति पूजा

सत्यप्रकाश
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रूड़की

मूर्ति पूजा का आदिकाल- संसार के विभिन्न भागों में मूर्ति पूजा का सूत्रपात कब और कहां हुआ। यह तो कहना कठिन है किन्तु जहाँ तक भारतवर्ष का संबंध हैं पूर्वी एवं पश्चिमी सभी इतिहासज्ञों तथा दार्शनिकों का मत है कि इसका जन्म काल जैन बौद्ध काल है। हिन्दू समप्रदाय वाले चाहे इस विचार से सहमत न हों किन्तु निष्पक्ष स्वतंत्र विचारक इस विषय में एक मत हैं। अतः जहाँ तक ऐतिहासिक खोज का संबंध है इसका समय जैन बौद्धकाल से पहले नहीं जाता।

वर्तमान जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी, महात्मा बुद्ध के समकालीन थे। भगवान बुद्ध की शिक्षाओं में कहीं भी मूर्ति पूजा का उल्लेख नहीं है। उन्होंने 80 वर्ष की आयु में निर्वाण पद प्राप्त किया। उनकी मृत्यु के पश्चात स्मारक रूप में उनके शिष्यों ने उनके केश, दाँत एवं अस्थियों को लेकर उन पर समाधियां निर्माण कर दीं। संभवतः कुछ काल व्यतीत होने पर अज्ञान एवं मौह वश इन स्मारक चिन्हों की पूजा आरंभ हो गयी। धीरे-धीरे समाधियों पर बुद्ध की मूर्तियां स्थापित कर दी गयीं और उनकी सर्वत्र पूजा होने लगी। अतः मूर्ति पूजा का प्रारंभिक काल महात्मा बुद्ध के जन्म के पश्चात् कुछ शताब्दी व्यतीत होने पर ही निश्चय होता है।

मूर्ति पूजा हमारे देश में बौद्ध काल से पूर्व किसी भी रूप में प्रचलित न थीं इसका सबसे प्रबल ऐतिहासिक प्रमाण चीन के दो प्रसिद्ध यात्री फाहियान एवं ह्वेनसांग का यात्रा विवरण है। फाहियान ने इस देश की यात्रा सन् 400 ई. में की। उसका कहना है कि उस समय काबुल में बौद्ध धर्म का पूर्ण विस्तार था और वहां 500 बौद्ध विहार थे। उसने मथुरा में 3000 बौद्ध भिक्षुओं को देखा था वह पूरे भारत में घूमता हुआ पटना पहुँचा, जहाँ पर बौद्धों के संघों में प्रथम बार बुद्ध की मूर्ति को देखा। वह लिखता है प्रतिवर्ष दूसरे मास के आठवें दिन मूर्तियों की एक सवारी निकाली जाती है। इस अवसर पर लोग चार पहियों का रथ बनवाते हैं उस रथ पर बुद्ध की मूर्तियां बैठी होती हैं। इस यात्रा के दिन नगर के लोग मूर्तियों की पूजा करते हैं। यहां से फाहियान, राजगृह, गया, काशी, कोशाम्बी और चम्पा जो पूर्व विहार की राजधानी थी, की यात्रा की। परन्तु उसने इन तीर्थों में एक भी हिन्दुओं का मंदिर नहीं देखा। सब जगह बौद्धों के संघाराम ही देखे। ताम्रपाली में भी उसने 24 संघाराम देखे। अन्त में वह जहाज द्वारा सिंहल की ओर चला गया। उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि फाहियान की यात्रा के समय हिन्दुओं के अनेकानेक वर्तमान देवी देवताओं की मूर्तियों के मंदिर नहीं थे। इस प्रकार फाहियान का यात्राकाल निर्विवाद रूप से मूर्ति पूजा का प्रारंभिक युग कहा जा सकता है।

फाहियान के लगभग 200 वर्ष के पश्चात् ह्वेनसांग एक दूसरा चीनी यात्री भारतवर्ष आया वह फरगन-समरकंद-बुखारा और बलख होता हुआ इस देश में आया। वह यात्री 640 ई. में भारतवर्ष में था। उसने यहां 5 शिवालय हिन्दुओं के देखे जिनके 100 पुजारी थे। कंधार और पेशावर में उसने एक हजार बौद्ध संघाराम को उजड़ा हुआ खण्डहर अवस्था में पाया और उसने तक्षशिला और कश्मीर में जैनियों को महावीर

फाहियान के लगभग 200 वर्ष के पश्चात् ह्वेनसांग एक दूसरा चीनी यात्री भारतवर्ष आया वह फरगन-समरकंद-बुखारा और बलख होता हुआ इस देश में आया। वह यात्री 640 ई. में भारतवर्ष में था। उसने यहां 5 शिवालय हिन्दुओं के देखे जिनके 100 पुजारी थे। कंधार और पेशावर में उसने एक हजार बौद्ध संघाराम को उजड़ा हुआ खण्डहर अवस्था में पाया और उसने तक्षशिला और कश्मीर में जैनियों को महावीर की मूर्ति पूजते देखा। हरिद्वार में उसने एक देव मन्दिर भी देखा जिसमें बड़े चमत्कार किये जाते थे। उस समय उसने बौद्ध संघारामों की कमी व देव मन्दिरों की अधिकता देखी।

ह्वेनसांग का यह यात्रा विवरण मूर्ति पूजा के इतिहास पर फाहियान की भॉति एक दूसरी अत्यन्त प्रमाणित निष्पक्ष साक्षी है। जहाँ फाहियान का समय बौद्ध धर्म के उत्कृष्ट और मूर्ति पूजा का आदिमयुग था वहां ह्वेनसांग के यात्राकाल में बौद्ध धर्म का बहुत कुछ ह्रास हो चुका था और हिन्दुओं के वर्तमान पौराणिक धर्म की मूर्ति पूजा में जड़ जम चुकी थी। कुछ विद्धानों का कहना यह भी है कि सबसे पहले मूर्ति पूजा जैन धर्म ने प्रारंभ की। बौद्धों ने जैनियों से और हिन्दुओं ने बौद्धों से और जैनियों से ग्रहण किया। संभव है कि बात ऐसी ही हो परन्तु हमारा वर्तमान तात्पर्य इतना कहना है कि हिन्दू धर्म की वर्तमान मूर्ति पूजा बौद्ध-जैन काल की ही देन है और प्राचीन आर्य धर्म से कोई भी इसका संबंध नहीं है।

पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अपनी **"हिन्दुस्तान की कहानी"** में हमारे ही उपयुक्त विचारों की समपुष्टि की है। वह इस पुस्तक के भारत और यूनान शीर्षक अध्याय में लिखते हैं कि यह एक मनोरंजक विचार है। मूर्ति पूजा भारत में यूनान से आयी यहां का वैदिक धर्म हर प्रकार की मूर्ति तथा प्रतियां पूजन का विरोधी था। उस (वैदिक) काल में देव मूर्तियों के किसी प्रकार के मन्दिर नहीं थे। यूनानी मूर्तिकला का अफगानिस्तान और सीमान्त प्रदेश के चारों ओर अधिक प्रभाव था। वह शनै-शनै यहां भी प्रविष्ट हो गया। किन्तु इस पर भी प्रारंभ में बुद्ध की मूर्ति न बनाकर **"अपोलो"** (यूनान का एक देवता) जैसी बोद्धिसत्वों की ही मूर्तियां बनाई गयी जो बुद्ध के पूर्व अवतार माने जाते थे। पीछे से स्वयं बुद्ध की मूर्तियां निर्माण होने लेगीं। हिन्दू धर्म के संप्रदायों ने भी इसका अनुसरण किया किन्तु वैदिक धर्म निरन्तर इस प्रभाव से मुक्त रहा।

आर्य समाज के पर्वतक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से किसी ने प्रश्न किया कि मूर्ति पूजा कहाँ से चली तो उन्होंने कहा जैनियों से यह उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखा है। प्राचीन वैदिक धर्म तो वेद को मानता है और वेद का आदेश है कि न तस्यं प्रतिमा अस्ति अर्थात ईश्वर की कोई मूर्ति नहीं होती।